"1935 का भारत सरकार अधिनियम"

कांग्रेस ने 1919 के मोन्टफोर्ड सुधारो को अपर्याप्त असन्तोषजनक तथा निराशापूर्ण बताया। प्रान्तो मे प्रचलित द्वैध-शासन की बुराइयाँ शीघ्र ही भारतीय राजनीतिज्ञो व जनता के सामने आने लगी। अतः 1919 के विधान के अन्तर्गत जब नई विधान सभा की बैठक हुई तो दीवान बहादुर रंगा चारियर ने एक प्रस्ताव रखा, जिसके माध्यम से उन्होने यह मांग की थी कि ब्रिटिश साम्राज्य के अन्तर्गत भारत को पूर्ण स्वायत्त औपनिवेशिक स्वराज्य और प्रान्तो को पूर्ण प्रान्तीय स्वतन्त्रता प्रदान की जाये। परन्तु ब्रिटिश सरकार को यह प्रस्ताव मान्य नही हुआ।

परिस्थितिया (i) स्वराज्य पार्टी का विरोध:—

कालान्तर में 1919 के एक्ट का विरोध अधिक दृढ तथा प्रभावशाली होता गया। उदारवादी दल जो सरकार से सहयोग करने को सदैव उद्यत रहते थे इन सुधारों के अपर्याप्त और असंतोषजनक मानने लगे। कुछ कांग्रेजी नेताओ ने, जिनमें मोतीलाल नेहरू और सी. आर. दास प्रमुख थे स्वराज्य दल की नींव रखी। उद्देश्य यह था कि विधान मण्डलो में जाकर संविधान को नष्ट किया जाया। ऐसा किया जाये कि सभा और परिषदो द्वारा सरकार चलानी असंभव हो जाये 1923 मे चुनावो मे इसे बंगाल और मध्यप्रान्त मे पूर्ण बहुमत मिल और कई अन्य प्रान्तो मे ये सबसे बडे दल के रूप मे सामने आया अपने चातुर्य से उन्होने जनता के समक्ष सरकार के पाखण्ड को उजागर कर दिया।

Scanned with CamScan

PAGE :
DATE : / /

इसके उपरान्त स्वराज्य पार्टी ने मोतीलाल नेहरू की अध्यक्षता में यह प्रस्ताव पारित किया कि भारत में पूर्ण उत्तरदायी शासन की स्थापना के विचार से 1919 के अधिनियम में सुधार किये जाये और इसे लिये गोलमेज सम्मेलन का आयोजन किया जाये। इससे स्पष्ट है कि 1919 का एक्ट भारतीयो को सन्तुष्ट नहीं सका और उन्हे 1935 का अधिनियम पारित करना पडा।

2. मुडीमेन समिति की रिपोर्ट:-

जब 1919 के अधिनियम के दोष स्पष्ट होने लगे तो 1924 में सर अलेक्जेंडर मुडीमेन के नेतृत्व में इसके दोषो की जानकारी तथा परिस्थितियो और कठिनाइयों का पता लगाने के लिये एक समिति का गठन किया गया। परन्तु यह समिति सुधारो को प्रस्तावित करने मे एक मत नहीं रह सकी। समिति के अधिकांश सदस्य इस मत से सहमत थे कि प्रान्तो में 1917 के अधिनियम क्रियान्वित हो रहा है इससे भारतीयों को मूल्यवान राजनीतिक अनुभव प्राप्त हो रहा है। इस अधिनियम को लागू किये अभी अल्प समय ही हुआ है अतः इसकी सफलता और विफलता के सम्बंध में अभी कुछ कहा नही जा सकता। सितम्बर 1925 में समिति ने अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की और सरकार ने इसे स्वीकार कर लिया।

3. साइमन कमीशन की नियुक्ति :→

Scanned with CamScanner

PAGE:
DATE: / /

1919 के एक्ट के अनुसार दस वर्ष बाद भारत मे उत्तरदायी सरकार की प्रगति की जाँच करने के लिये एक आयोग की नियुक्ति होनी थी। परन्तु नवम्बर 1927 में ही ब्रिटिश सरकार ने एक आयोग सर साइमन की अध्यक्षता मे, इसकी समीक्षा के लिये नियुक्त कर दिया। इस प्रकार सरकार द्वारा यह स्वीकार कर लिया गया कि 1919 के सुधार असफल रहे है। साइमन कमीशन का उद्देश्य यह पता लगाना था कि ब्रिटिश भारतीय प्रान्तो मे सरकार कैसे चल रही है प्रतिनिधि संस्थाएं कहाँ तक ठीक कार्य कर रही है। और उत्तरदायी सरकार के सिद्धान्त को कहाँ तक बढाया जाये आदि। जब कमीशन भारत आया तो इसका सर्वत्र बहिष्कार किया गया। आयोग की रिपोर्ट जो 1930 मे प्रकाशित की गई थी मे यह सुझाव दिये गये कि प्रान्तो मे विधि तथा व्यवस्था सहित सभी क्षेत्रो मे उत्तरदायी सरकार गठित की जाया केन्द्रीय विधान मण्डल को पुर्नगठित किया जाये जिससे एकात्मक की भावना को छोड़कर संघीय भावना हो और इसके सदस्य परोक्ष रूप मे प्रान्तीय विधानमण्डलो द्वारा चुने जाये।

4. नेहरू रिपोर्ट:→

जब भारतवासी साइमन कमीशन का बहिष्कार कर रहे थे, तो उस समय भारत सचिव लार्ड बुकनहैड ने भारतीयो को ऐसा संविधान बनाने की चुनौती दी जिससे सभी सहमत हो। बुकनहैड ने एक श्वेत पत्र जारी करते हुए कहाँ कि भारतीय सर्व प्रथम सहमति से एक विधान तैयार करके ब्रिटिश संसद मे पेश करे। कांग्रेस ने इस चुनौती

को स्वीकार कर लिया। सभी भारतीय राजनैतिक दलों की सर्वदलीय कांग्रेस दिल्ली में बुलाई गई। मोतीलाल नेहरू की अध्यक्षता में गठित एक समिति ने भारतीय संविधान को का सर्व अनुमोदित स्वरूप प्रस्तुत किया। नेहरू कमेटी ने यह रिपोर्ट दी कि साम्प्रदायिक चुनाव पद्धति को त्याग दिया जाय तथा उसके स्थान पर अल्पसंख्यकों के लिये उनकी जनसंख्या के आधार पर स्थान आरक्षित कर लिये जाये। इसमें समस्त भारत के लिये एक इकाई वाला संविधान प्रस्तुत किया जिसके द्वारा भारत को केन्द्र तथा प्रान्तों में पूर्ण प्रादेशिक स्वायत्तता (Dominium Status) मिले मुस्लिम लीग ने भी जिन्ना द्वारा प्रस्तुत 14 सूत्रों (Fourteen point) में अपने आरक्षण प्रस्तुत किया। रिपोर्ट से कांग्रेस में बड़ी सरगर्मी आ गई। 1920 में कांग्रेस ने इसे स्वीकार कर सरकार को आगाह किया कि यदि सरकार ने इस रिपोर्ट को एक वर्ष में स्वीकार नहीं किया तो कांग्रेस आन्दोलन संगठित करेगी।

5. लार्ड इरविन की घोषणा:-

1929

में लार्ड इरविन ने रैम्जे मैकडोनल्ड की नवगठित श्रमिक सरकार से मन्त्रणा करने के पश्चात् यह घोषणा कि की भारत की उन्नति का अन्तिम चरण 'डोमिनियन स्टेटस' प्राप्त करना है इसके अतिरिक्त उन्होंने यह भी घोषणा की कि अंग्रेजी सरकार ने यह निश्चय किया है कि साइमन

Scanned with CamScanner

कमीशन की रिपोर्ट की इंग्लैण्ड में एक गोलमेज कांग्रेस में विवेचना की जायेगी जिसमें अंग्रेजी सरकार भारतीय अंग्रेजी प्रदेश तथा भारतीय रियासतों के प्रतिनिधि भाग लेंगे।

6. कांग्रेस की पूर्ण स्वाधीनता की मांग :→

इरविन की घोषणा में सभी बातें अस्पष्ट थी अतः गांधीजी ने उनसे मिलकर इन्हें स्पष्ट कर लेना उचित समझा। इसलिये उन्होंने लार्ड इरविन से भेंट का निश्चय किया इस बैठक का कोई विशेष परिणाम नहीं निकला क्योंकि वायसराय भारतीय अधिराज्य के नए संविधान के लिये कोई आश्वासन देने की स्थिति में नहीं थे। वे यह भी कहने के लिये तैयार नहीं थे कि गोलमेज सम्मेलन भारत में पूर्ण उत्तरदायी शासन स्थापित करने के लिये बुलाया जायेगा। इससे कांग्रेस को बड़ी निराशा हुई। उन्हें यह विश्वास हो गया कि ब्रिटिश सरकार भारत को स्वराज्य तक कभी नहीं देगी जब तक उसे मजबूर न किया जाये। अतः 31 दिसम्बर 1929 को लाहौर अधिवेशन में पूर्ण स्वाधीनता का प्रस्ताव पारित किया गया।

7. सविनय अवज्ञा आन्दोलन - ब्रिटिश सरकार ने नेहरू रिपोर्ट को स्वीकार करने से इन्कार कर दिया था। वह अधिराज्य स्थिति के संविधान बनाने के लिये गोलमेज सम्मेलन बुलाने को तैयार नहीं थी। इसलिये कांग्रेस को सविनय अवज्ञा आन्दोलन आरंभ करना पड़ा।

Scanned with CamScanner

गांधीजी ने दांडी यात्रा कर, नमक कानून को तोड़ा जगह-2 पर हड़तालें हुई, विदेशी सामान की होली जलाई गई। सरकार का दमन चक्र पूरे जोरों से चलने लगा। और कई प्रमुख राष्ट्रीय नेताओं को गिरफ्तार कर जेल में डाल दिया गया।

2. गोल-मेज सम्मेलन:→

जब आन्दोलन पूरे जोरों पर था तब सरकार ने भारतीय समस्या को हल करने के लिये जनवरी 1931 में लन्दन मे एक गोलमेज सम्मेलन बुलाया कांग्रेस ने इसका बहिष्कार किया क्योंकि इसमें कोई भारतीय प्रतिनिधि नही था। अत: 7 सितम्बर 1931 द्वितीय गोलमेज सम्मेलन आयोजित किया गया। इसमे इरविन से समझौता हो जाने के कारण गांधीजी सम्मिलित हुए। परन्तु इसी अन्तराल मे ब्रिटेन की मजदूर दलीय सरकार पदच्युत हो गई। अनुदार दल का सर सैमुअल भारत सचिव बना। उसने साम्प्रदायिक समस्या सुलझाने के बहाने साम्प्रदायिक निर्णय (Communal Award) भारत को तोहफे के रूप मे दिया। इस निर्णय ने भारत के हिन्दु, मुसलमान, हरिजन व सिक्खो में आपस मे विभक्त कर दिया। कांग्रेस ने इस निर्णय का घोर विरोध किया और वह ब्रिटिश सरकार के विरुद्ध संघर्ष की तैयारी करने लगी। महात्मा गांधी ने इसके

Scanned with CamScanner

विरोध में आमरण अनशन किया और पुना समझौते के अनुसार इसका स्वरूप कर दिया गया।

7 ब्रिटिश संसद की संयुक्त समिति रिपोर्ट:— 1932 में तीसरे गोलमेज सम्मेलन की समाप्ति पर ब्रिटिश सरकार ने एक श्वेत पत्र जारी किया। इस पत्र प्रकाशित होने से बाद दोनो सदनो की एक समिति बनाई गई। इसने एक रिपोर्ट तैयार की और इस रिपोर्ट के आधार पर ही 1935 का सुधार अधिनियम पारित किया गया।

"1935 के अधिनियम की विशेषताए"

1935 का भारतीय शासन अधिनियम बहुत लम्बा और जटिल था। अधिनियम में 451 धाराएं और 15 परिशिष्ट थे। अधिनियम के इतने लम्बे और पेचीदा होने का मूल कारण यह था कि एक और तो भारत में बढती हुई राष्ट्रीयता के कारण भारत के लोगो को सत्ता का हस्तान्तरण आवश्यक हो गया था, दूसरी और ब्रिटिश सरकार शक्ति हस्तान्तरण के साथ-2 अपने हितो की रक्षा की पूरी व्यवस्था कर लेना चाहती थी। इसमें पूर्ण स्वतन्त्रता था या औपनिवेशिक स्वराज्य के बारे में कोई आश्वासन नही दिया गया था और न ही भारत की राष्ट्रीय भावनाओ के बारे मे गम्भीरतापूर्वक विचार किया गया था। इतना सब कुछ होते हुए भी यह एक्ट अत्यन्त महत्वपूर्ण

था क्योंकि इसमें पहली बार ब्रिटिश प्रान्तों और देशी रियासतों को मिलाकर केन्द्र में संघ Federation स्थापित करने का सुझाव दिया गया। प्रान्तों में दोहरा शासन समाप्त करके प्रान्तीय स्वराज्य शुरू किया गया और केन्द्र में थोड़ी सी उत्तरदायी सरकार स्थापित की गई थी।

संघात्मक शासन व्यवस्था :— 1935 के अधिनियम के अनुसार भारत में पहली बार एक संघात्मक शासन की व्यवस्था की गई थी। यह निर्णय किया गया कि केन्द्र में ब्रिटिश प्रान्तों और देशी रियासतों को मिलाकर एक संघ स्थापित किया जाये। यह संघ 11 ब्रिटिश प्रान्तों 6 चीफ कमीश्नर के क्षेत्रों और उन देशी रियासतों से मिलकर बनाना था। अधिनियम के अनुसार प्रान्तों के लिये संघ में शामिल होना अनिवार्य, परन्तु देशी रियासतों के लिये ऐच्छिक था। संघ में सम्मिलित होने की इच्छा रखने वाली देशी रियासतों को एक प्रवेश लेख या स्वीकृत लेख (Instrument of Accession) पर हस्ताक्षर करने पड़ते थे। इस प्रपत्र में उन शर्तों का उल्लेख किया जाता था, जिन पर वह संघ में सम्मिलित होना चाहती हो। संघ की इकाइयों को आन्तरिक मामलों में स्वशासन प्राप्त था। संघ और उसकी इकाइयों के विवादों का निर्णय करने के लिये एक संघीय न्यायालय की स्थापना की गई। केन्द्र में एक संघीय

कार्यकारिणी तथा व्यवस्थापिका की स्थापना की गई।

(iv) केन्द्र सरकार के अन्तर्गत भारत सचिव की स्थिति में कोई विशेष परिवर्तन नहीं हुआ। इस अधिनियम द्वारा केन्द्र में आंशिक उत्तरदायी शासन की स्थापना की गई थी। इसलिये भारत मन्त्री की निरीक्षण, निर्देशन तथा नियन्त्रण शक्ति समाप्त में निहित कर दी गई थी। परन्तु यह परिवर्तन औपचारिक था क्योंकि सम्राट की भारतीय शासन सम्बंधी शक्तियों का प्रयोग भारत मन्त्री ही करता था। संघ की स्थापना की पूर्व शर्त यह थी कि कम-से-कम समस्त देशी रियासतों की कुल जनसंख्या की आधी जनसंख्या वाली देशी रियासतों संघ में सम्मिलित होने की इच्छा प्रकट करती है।

2. प्रान्तीय स्वायत्तता :→ 1935 के अधिनियम की एक अन्य महत्वपूर्ण और संभवतया एक मात्र सन्तोषजनक व्यवस्था प्रान्तीय स्वशासन की स्थापना थी। उन्हें स्वतन्त्र और स्वशासित संवैधानिक आधार प्रदान किया गया। सम्पूर्ण प्रान्तीय शासन लोकप्रिय मन्त्रियों के नियन्त्रण में कर दिया गया और गवर्नर से यह आशा की गई कि उसके द्वारा मन्त्रियों की सलाह के आधार पर प्रशासन का संचालन किया जायेगा। मन्त्रियों को प्रान्तीय व्यवस्थापिका के प्रति उत्तरदायी बनाया गया और सामूहिक उत्तरदायित्व के आधार पर कार्य करने का निश्चय किया गया। लेकिन

Scanned with CamScanner

गवर्नरो के हाथ मे विशेष उत्तरदायित्व के रूप मे कुछ शक्तियां बनी रही।

केन्द्र मे द्वैध शासन की स्थापना :→ 1935 के अधिनियम द्वारा प्रान्तो में जिस द्वैध शासन का अन्त किया गया था, उसकी केन्द्र मे स्थापना कर दी गई। संघीय विषयो को दो भागो मे बाटा गया आरक्षित विषय और हस्तान्तरित विषय आरक्षित विषयो मे प्रतिरक्षा धर्म, विदेशी मामले और कबीलो के मामले सम्मिलित थे। उनका शासन गवर्नर जनरल अपनी इच्छानुसार कर सकता था। इन विभागो के प्रबन्ध के लिये वह अधिक से अधिक तीन परामर्शदाताओ की नियुक्ति कर सकता था। हस्तान्तरित विषयों के शासन के लिये गवर्नर जनरल को सहायता तथा परामर्श देने हेतु एक मन्त्रिमण्डल की व्यवस्था की गई जिनमे मन्त्रियो की संख्या 10 से अधिक नही हो सकती थी संघीय मन्त्रिमण्डल को उक्त सुरक्षित विभागो के अतिरिक्त अन्य सभी संघीय विभागों की व्यवस्था करने करनी होती थी और मन्त्रिमण्डल व्यवस्थापिका के प्रति उत्तरदायी था गवर्नर जनरल को दोनो आरक्षित और हस्तान्तरित विषयो के संचालन का अधिकार था और वह इन दोनो मे सहयोग उत्पन्न कर सकता था।

Scanned with CamScanner

4. संरक्षण और आरक्षण:→ 1935 के अधिनियम की एक मुख्य विशेषता यह थी कि इसमें अल्पमतों और अनेक वर्गों की रक्षा के हितो के लिए बहुत से रक्षा कवचो (Safeguards) और संरक्षणो की व्यवस्था की गई थी। प्रान्तो मे गवर्नर तथा केन्द्र में गवर्नर जनरल को विशेष शक्तियों प्रदान की गई थी। अल्पमतो की रक्षा के नाम पर धार्मिक सदभावना एवं शान्ति और व्यवस्था बनाये रखने के नाम पर गवर्नर तथा गवर्नर-जनरल को विशेष शक्तियाँ प्राप्त थी। परन्तु मूल मे इसका उद्देश्य भारत मे ब्रिटिश साम्राज्य के हितो की रक्षा करना था। जिन्ना के ने कहाँ था कि " भारत मे दो प्रतिशत उत्तरदायी शासन " तथा अठानवे प्रतिशत संरक्षण और विशेष उत्तरदायित्वो वाला शासन स्थापित किया गया है।

5. ब्रिटिश संसद की सर्वोच्चता:→ अधिनियम द्वारा भारतीय शासन के संबंध मे ब्रिटिश संसद की सर्वोच्चता मे कोई परिवर्तन नहीं किया गया। भारत के भविष्य निर्धारण अन्तिम सत्ता अभी भी ब्रिटिश संसद मे निहित थी। अधिनियम मे किसी भी प्रकार के परिवर्तन करने का अधिकार प्रान्तीय विधानमण्डलो और व्यवस्थापिकाओ को नहीं दिया गया। भारतीय शासन के सर्वोच्च अधिकारी गवर्नर जनरल भारत मन्त्री के माध्यम से ब्रिटिश संसद के प्रति उत्तरदायी था।

Scanned with CamScan

6. संघीय न्यायालय की व्यवस्था:→

अधिनियम द्वारा एक संघीय न्यायालय की स्थापना की गई जिनका अधिकार क्षेत्र प्रांतों तथा रियासतों एक विस्तृत था एक्ट में यह व्यवस्था की गई कि संघ की इकाइयों के आपसी झगड़ों का निपटारा करने के लिये एक संघीय न्यायालय होगा। इसको 1935 के अधिनियम की व्याख्या करने का अधिकार भी दिया गया। वस्तु इस संबंध में अंतिम शक्ति लन्दन स्थित प्रिवी कौंसिल को प्राप्त थी।

7. विधानमण्डलों और मताधिकार का विस्तार:→

अधिनियम के अन्तर्गत केन्द्रीय और प्रान्तीय व्यवस्थापिकाओं का विस्तार किया गया। संघीय व्यवस्थापिका में दो सदनों की व्यवस्था की गई जिनमें एक संघीय विधानसभा दूसरी राज्य परिषद थी। केन्द्र में सदस्यों की संख्या 375 (विधानसभा) और 260 (राज्य सभा) निश्चित की गई प्रांतों में 11 में से 6 विधानमण्डलों को दो सदनों वाला बनाया गया। अधिनियम द्वारा मताधिकार का विस्तार किया गया और प्रांतों के लिये 10% से कुछ अधिक जनता को मताधिकार प्रदान किया गया। संघीय व्यवस्थापिका के संगठन के सम्बंध में एक विशेष बात यह थी इसमें निम्न सदन के निर्माण हेतु प्रत्यक्ष और उच्च सदन के निर्माण हेतु

Scanned with CamScanner

प्रत्यक्ष निर्वाचन पद्धति को अपनाया गया।

8. **शक्ति विभाजन :→**

संघीय सरकार के लिये पहली शर्त शक्तियों का विभाजन है। 1935 के अधिनियम के अन्तर्गत विषयों को तीन भागों में बाटा गया केन्द्रीय - अखिल भारत हित के विषय जैसे सेना, मुद्रा, डाक, तार और विदेशी मामले। प्रान्तीय विषय → स्थानीय स्वशासन - भूराजस्व स्वास्थ्य कृषि सिचांई आदि। समवर्ती सूची में उन विषयों को रखा गया जो केन्द्र और प्रान्त दोनों दृष्टियों से सामान्य दीवानी और फौजदारी विधि, विवाह, तलाक उत्तराधिकार ट्रस्ट कारखाने, श्रमिक कल्याण आदि। समवर्ती सूची के विषयो के लिये यह व्यवस्था की कि यदि केन्द्र और प्रान्त के बनाये हुए कानून में विरोध हो तो केन्द्र का कानून ही माना जायेगा। अवशिष्ट शक्तियाँ गवर्नर जनरल के हाथो मे ~~छ~~ छोड़ दी गई। वह उन्हें केन्द्रीय अथवा प्रान्तीय सरकार को प्रदान कर सकता था। संघीय विषयों पर संघीय व्यवस्थापिका और प्रान्तीय विषयों पर प्रान्तीय व्यवस्थापिका तथा समवर्ती सूची के कानून का निर्माण दोनो ही करसकती थी।

9. **भारत परिषद् का अन्त:→** 1935 के अधिनियम द्वारा भारत परिषद का अन्त कर दिया गया। इसके स्थान पर भारत सचिव के लिये कुछ परामर्शदाता नियुक्त किये गये जिनकी संख्या 6 से

अधिक और तीन से कम नहीं हो सकती। भारत सचिव का नियन्त्रण पहले की भांति ही बना रहा।

10. साम्प्रदायिक निर्वाचन का विस्तार :→

यद्यपि यह बात स्पष्ट हो गई थी कि सम्प्रदायिक चुनाव पद्धति भारत के हित मे नहीं है लेकिन इस अधिनियम से संघीय और प्रान्तीय व्यवस्थापिकाये विभिन्न सम्प्रदायों और विशेष हितो के प्रतिनिधित्व देने की पद्धति न केवल जारी रखी गई वरन आंग्ल-भारतीयो, ईसाइयो, यूरोपियनो और हरिजनों के लिये भी इस पद्धति का विस्तार किया गया। संघीय व्यवस्थापिका के दोनो सदनों में मुसलमानो को 1/3 स्थान प्रदान किये गये।

11. प्रस्तावना का अभाव :→

इस अधिनियम की कोई प्रस्तावना नही थी जिससे इसके निर्दिष्ट ध्येय का उद्देश्य का ज्ञान हो सकता।

12. बर्मा, बरार और अदन :→

इस अधिनियम से बर्मा को भारत से पृथक कर दिया गया और अदन को भारत सरकार के नियन्त्रण से मुक्त कर अप्रैल 1931 को इंग्लैण्ड के औपनिवेशिक कार्यालय के अधीन कर लिया। यद्यपि बरार के ऊपर निजाम हैदराबाद की नाममात्र की सत्ता स्वीकार कर ली गई, परन्तु उसको शासन की

Scanned with CamScanner

दृष्टि से मध्य प्रान्त का अंग बना दिया गया।

आलोचना:→ कूपलैण्ड ने 1935 के अधिनियम को रचनात्मक राजनीतिक विचार की एक महान् सफलता बताया उनके मत में, इस एक्ट ने भारत के भाग्य को अंग्रेजो के हाथ से भारतीयों के हाथो से बदल दिया। इस विचार से भारतीय सहमत नहीं थे। स्वयं एटली ने इस बात को स्वीकार किया कि इसमें अधिराज्य स्थपतिया औपनिवेशिक स्वराज्य की चर्चा तक नहीं थी। भारत की सभी मुख्य संघ का निर्माण करने वाली इकाइयो को अपने संविधान निर्माण का कोई अधिकार नहीं दिया गया था न नहीं उन्हे संविधान में संशोधन की शक्ति प्रदान की गई थी।
दलो ने इसकी निन्दा की। इसकी आलोचना के मुख्य कारण थे :—

1. दोषपूर्ण संघ:→ 1935 के एक्ट के अनुसार केन्द्र मे जिस संघ की स्थापना के लिये सुझाव दिया गया था, वह अत्यन्त दोषपूर्ण था। इस संघ में ब्रिटिश प्रान्तो को मिलाना अनिवार्य था परन्तु देशी रियासतो की इच्छा पर छोड़ दिया गया था। कि वे इसमें शामिल हो न हो। संघ में आकार, जनसंख्या महत्व और राजनैतिक लक्ष्यो की दृष्टि से नितान्त भिन्न प्रकार

की इकाइयों के मेल का प्रयत्न किया गया था। इस प्रस्तावित संघ में न तो भारतीयों को सत्ता का हस्तान्तरण किया गया था और न ही इसमें आत्मनिर्भय आत्मनिर्णय, सामान्य नागरिकता या संघीय हस्तक्षेप में समानता का प्रबंध था। इसके अतिरिक्त अविशिष्ट शक्तियां न तो प्रान्तों को दी गई न केन्द्र को इन्हें गवर्नर की इच्छा पर छोड़ दिया गया। संघ के अधिकार और शक्तियाँ अत्यन्त सीमित थे और गवर्नर जनरल को तानाशाही अधिकार प्राप्त थे।

2. गवर्नर जनरल :→ और गवर्नरों को विशेषाधिकार :→

इस अधिनियम में सबसे बड़ा दोष यह था कि इसमें गवर्नर जनरल और गवर्नरों को अनेक विशेषाधिकार दे दिये गये थे। इसलिये प्रान्तों में उत्तरदायी सरकार की स्थापना निरर्थक हो गयी। वे विधि निर्माण तथा कार्यपालिका के हर क्षेत्र में हस्तक्षेप कर सकते थे। उन्हें पूर्ण अधिकार था कि ब्रिटिश साम्राज्य के हितों की रक्षा के लिये वे अपनी विशेष शक्तियों का प्रयोग कर सकते थे। डा० राजेन्द्र प्रसाद ने 1934 में कांग्रेस में अपने अध्यक्षीय भाषण में कहा था, यह कहना कि ये विषय हस्तान्तरित हैं, बिलकुल छल और धूर्तता है जबकि उनके विषय में जिम्मेदारियाँ अंग्रेजों के पास सुरक्षित है। गवर्नर जनरल और ब्रिटिश ताज तथा पालियामेन्ट को दी हुई विस्तृत

शक्तियो मे प्रान्तीय स्वराज्य को नहीं ले बराबर कर दिया है जो भारतीयो के लिये सबसे बड़ा पुरस्कार था। "वस्तुत 1935 के अधिनियम द्वारा उसे इतनी शक्तियां प्रदान की गई थी कि उसका स्वरूप

3. साम्प्रदायिक चुनाव-प्रणाली का विस्तार :—

यद्यपि साम्प्रदायिक चुनाव-प्रणाली देश के लिये अहितकर थी, फिर भी न केवल इसे कायम रखा गया, किन्तु इसका विस्तार भी किया गया। इसने भारतीय राजनीतिक वातावरण को और अधिक विषैला बना दिया। वास्तव में पाकिस्तान ~~को~~ ~~और~~ के निर्माण तथा भारत के विभाजन का सबसे बड़ा कारण इन साम्प्रदायिक निर्वाचनो द्वारा भारतीय समाज में प्रविष्ट पृथकता की भावनाएँ ही थी।

4. रक्षा कवच :—

संरक्षण और आरक्षण की व्यवस्था द्वारा गवर्नर तथा गवर्नर जनरल को विशेष शक्तियां तथा अधिकार दिये गये थे। अल्पमत सदैव अपने हितो की रक्षा के लिये अंग्रेजो के मुख की तरफ देखते थे। इस तरह से वे गतिशील तत्वो के विरुद्ध अंग्रेजो के सहायक बन गये।

5. आत्मनिर्णय के सिद्धान्त का अभाव :—

इस अधिनियम मे भारतीयों को आत्मनिर्णय का अधिकार नहीं दिया गया था भारतीयो को अपना स्वतन्त्र संविधान बनाने का

Scanned with CamScanner

अधिकार नही था। यह अधिनियम ब्रिटिश संसद ने बनाया था और भारत की आगे की प्रगति की निर्णायक भी ब्रिटिश संसद ही थी।

6. जनतान्त्रिक शासन पद्धति की उपेक्षा :→ इस अधिनियम के द्वारा जनतान्त्रिक शक्तियो की पूर्ण उपेक्षा की गई थी संसद के प्रत्येक संघ के निचले सदन में सदस्य जनता द्वारा चुने जाते है, किन्तु इस अधिनियम द्वारा निम्न सदन मे अप्रत्यक्ष चुनाव की पद्धति अपनाई गई। मताधिकार भी सीमित था तथा सम्पति की योग्यता पर आधारित था। इसके अतिरिक्त उच्च सदन को निचले सदन की अपेक्षा कहीं अधिक अधिकार दिये गये थे, जो सर्वथा जनतान्त्रिक सिद्धान्तो के विरोधी थे। इसी कारण पण्डित 'मदनमोहन मालवीय' ने इस अधिनियम की आलोचना करते हुए कहा, "नया अधिनियम हम पर थोपा गया है। बाहर से यह जनतान्त्रिक शासन व्यवस्था से बिल्कुल मिलता जुलता है, किन्तु भीतर से पूर्णतया खोखला है"।

7. केन्द्र में द्वैध शासन प्रणाली :→ 1919 के अधिनियम के द्वारा प्रान्तो में द्वैध शासन प्रणाली की व्यवस्था की गई थी जो पूर्णतया असफल रही तथा भारतीयो द्वारा इसका विरोध

Scanned with CamScanner

किया गया था। इसके पश्चात भी 1935 के अधिनियम द्वारा केन्द्र मे इस व्यवस्था को लागू किया गया था। अतः स्पष्ट था कि अंग्रेज भारतीयों को किसी प्रकार की सुविधा देने के पक्ष मे नही थे।

उपर्युक्त वर्णन से स्पष्ट है कि 1935 के अधिनियम में गुण कम दोष अधिक थे। इसी कारण जिन्ना ने कहाँ " 1935 का अधिनियम पूर्णतया सड़ा हुआ, मौलिक रूप से खराब तथा पूर्णतया अस्वीकारणीय है। 'पण्डित जवाहर लाल नेहरू ने इस अधिनियम का विश्लेषण करते हुए लिखा है "इस अधिनियम के द्वारा संघात्मक ढाँचा इस प्रकार बनाया गया है कि वास्तविक प्रगति करना असम्भव है यह ढांचा प्रतिक्रियावादी है और इसमे आत्म विश्वास के अंकुर भी नही है। , क्रान्तिकारी दलो का तो प्रश्न ही क्या है।

8. पंगु व्यवस्थापिकाए :> किसी भी प्रजातन्त्रिक देश मे शासन सम्बंधी सर्वोच्च सत्ता का वास व्यवस्थापिका मे होता है। परन्तु 1935 के अधिनियम के अन्तर्गत व्यवस्थापिका का गठन इतना दोषपूर्ण था कि वह देश की वास्तविक प्रतिनिधि सभा नही बन सकी। केन्द्रीय व्यवस्थापिका मे विशुद्ध साम्प्रदायिक आधार पर निर्वाचन पद्धति थी। देशी रियासतो को जिस तरह के चाहे प्रतिनिधि भेजने छूट थी। वे राजाओ द्वारा मनोनीत भी हो सकते थे। इसके अतिरिक्त व्यवस्थापिका की विधायी और आर्थिक शक्तियो पर इतने प्रतिबन्ध थे कि नेहरू के शब्दो मे "राजनीति और आर्थिक सत्ता पहले की तरह ब्रिटिश शासन के हाथ मे रही"

इति शुभम

Scanned with CamScan